भारत में राष्ट्रीय चेतना का प्रादुर्भाव

* नाईक नारायण ज्ञानोबा

शोधपत्र

भारत के स्वतंत्रता आंदोलन की गिनती आधुनिक विश्व की सबसे बडी एवं प्रभावोत्पादक घटनाओं मे होती है। भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन अपने तरह का एकमात्र आंदोलन है, जिसमे दृष्टिकोनों के टकराव का ग्राम्शी व्दारा प्रतिपादित सैध्दांतिक परिप्रेक्ष्य सफलतापूर्वक अंमल मे लाया गया। जहां राजसत्ता पर क्रांती के जरिए एक खास ऐतिहासिक क्षेत्र में कब्जा नही किया बल्की इसके विपरीत नैतिक, राजनीतिक और विचारात्मक तिनो ही स्तरपर लंबे जनसंघर्ष चलाकर इसको हासिल किया गया। जहां अनेक वर्षों मे जवाबी राजनीतिक नेतृत्व की शक्ती संचित कि गई तथा जहां संघर्ष और शांति के दौर बारी–बारी से आते–जाते रहे।[1]

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध्द में भारत में राष्ट्रीय चेतना का प्रादुर्भाव: अंग्रेजों ने भारत में राष्ट्रीय चेतना के प्रादुर्भाव में अनजाने ही अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। ब्रिटीश सरकार की प्रशासनिक नीतियों के कारण भारत में केन्द्रीय सत्ता की स्थापना हुई जिसके कारण वास्तविक और आधारभूत राजनीतिक एवं प्रशासनिक एकीकरण हुआ। समस्त देश में समान कानून व न्याय व्यवस्था तथा आर्थिक नीतियाँ लागू हुई। कानून की दृष्टि में सभी नागरिक बराबर थे। प्रशासनिक एकता ने संपूर्ण भारतवासियों में एक राष्ट्र होने का भाव गहरे उत्पन्न किया। पाश्चात्य शिक्षा लागू करने के पिछे भी ब्रिटीश साम्राज्यवादीयों का विश्वास था की वे ब्रिटीश प्रशासन और व्यापारीक फर्मों के लिए क्लर्क जूटा सके। इसके जरिए वे ऐसे भारतीय पैदा करना चाहते थे जो केवल मूल एवं रंग से भारतीय हो किंतू विचारों से अंग्रेज हो। किंतू दुर्भाग्यवश अंग्रेजों की इस नीति का परिणाम उलटा हुआ पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने के कारण भारतीयों को पश्चिम के उदारवादी साहित्य को पढने का अवसर मिला। इस कारण पढे–लिखे कुछ भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना उत्पन्न हुई वे जनतंत्रवादी और राष्ट्रवादी बन गए।[2] इस प्रकार ब्रिटीश शासकों के न चाहने पर भी अंग्रेजी शिक्षा से भारतीयों को कुछ लाभ अवश्य हुआ, लेकिन इसका यह अर्थ नही है कि, पाश्चात्य शिक्षा के बिना राष्ट्रीय आंदोलन पनप ही नही सकता था। शिक्षा चाहे जिस भी पध्दती से दी जाती, राष्ट्रीय आंदोलन तो पैदा होता हैं। राष्ट्रवाद मात्र प्रगतिशील शिक्षा की ही देन नही है इसके पनपने मे राष्ट्रीय जीवन मे व्याप्त अनेकानेक तथ्य भी समान रुप से उत्तरदायी है। ऐसे समय जब राष्ट्रीयता कि भावना का उदय नही हुआ था, संस्कृती व परम्पराओं पर आने वाले खतरे के अहसास ने लोगों को मर मिटने के लिए प्रेरीत किया क्योंकि संस्कृती और परम्परा ही राष्ट्रीय भावना का पर्याय बन गई।[3] शिक्षा, यातायात, दूरसंचार, प्रेस, सिविल सर्विस, न्यायालय एवं अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में होने वाले समस्त परिवर्तनों का अखिल भारतीय प्रभाव उत्पन्न हुआ। ब्रिटीश हुकूमत ने इन क्षेत्रों में जो कार्य किए उसका उद्देश्य भारत का आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक अथवा सांस्कृतिक विकास करना नही था। इन्हे मुल रुप से भारत में अंग्रेजों की आर्थिक, राजनीतिक और सैनिक स्वार्थों कि पूर्ति के लिए किया गया।

राष्ट्रीय आंदोलन के प्रादुर्भाव के आर्थिक कारण: सन 1857 के विद्रोह को दबा देने के बाद जहां अंग्रेजी हुकूमत के ढांचे में परिवर्तन आया वही भारत में भी राष्ट्रीयता का बोध तेजी से पनपने लगा। इस विद्रोह के पश्चात सत्ता ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों से निकलकर ब्रिटीश क्राउन के अधिन आयी। जिस समय अंग्रेज यहां आये उस समय भारत एक राष्ट्र के रुप में नही था क्योंकि भारतीय संदर्भों में राष्ट्रवाद एक आधुनिक युग की चीज है। भारत में राष्ट्रीयता के विकास की प्रकिया बडी जटील और बहुमूखी है। यहाँ की अर्थव्यवस्था का आधार यूरोपिय देशों के पूंजीवाद से पूर्ववर्ती काल के समाजों से भिन्न था। भारत विभिन्न भाषाओं, विभिन्न धर्मो तथा बहुत विशाल आबादी वाला देश है। भारतीय राष्ट्रवाद के विकास की पृष्ठभूमि की यह विशेषता है कि, खासतौर पर हिन्दू समाज और सामान्यतः सारा भारतीय समाज खंडीत और विभाजित रहा। भारतीय राष्ट्रवाद का एक दिलचस्प पहलू यह भी है कि, इसका जन्म राजनीतिक पराधीनता के दिनों में हुआ।[4] ब्रिटेन में अपने हित में भारतीय समाज के आर्थिक ढॉचे में आमूल परिवर्तन किया, केन्द्रीयभूत राज्य व्यवस्था की स्थापना की, आधुनिक शिक्षा पद्धति की नींव डाली, आवागमन के नए साधन विकसित किए और इसी प्रकार की अन्य अनेक संस्थाओं का निर्माण किया। इसके फलस्वरुप नए सामाजिक वर्गों का जन्म हुआ

* मु. हाटकरवाडी पो. रामपूरी ता. मानवत जि. परभणी

और अपने आप में कई नई सामाजिक शक्तियों का उदय संभव हो सका। ये नए सामाजिक तत्व राष्ट्रीयता के विकास की आधारशिला ही नहीं, उसके लिए प्रेरणा का स्त्रोत सिध्द हुए।[5] समाचार पत्र–पत्रिकाओं एवं अन्य साहित्य का भी राष्ट्रवाद के प्रचार में बडा योगदान रहा समाचार पत्र–पत्रिकाओं व्दारा लोगों को राजनीतिक घटनाक्रम और सरकार की नीतिओं की सूचना मिलने लगी। इसके मदद से ही भारतीय राष्ट्रवादी जनता के मध्य उपनिवेशिक स्वराज्य की मांग, ब्रिटीश शासन की नीतिओं की आलोचना, राजनीतिक समस्याओं सरकार तंत्र के शोषण उत्पीडन आदि. मुद्दों को पहूंचा सकते थे। जो एक तरफ भारत वासियों के बढते आंदोलन का दर्पण था और दूसरी तरफ उसे बढाने का प्रयास। आधुनिक हिंदी के पिता भारतेंदू हरिश्चंद्र साहित्यकार मात्र न थे वह स्वदेशी आंदोलन के अग्रदूत और प्रसिध्द सुधारक भी थे। हिंदी, उर्दू, बंगाली, मराठी, गुजराती व तमिल भाषा में उत्कृष्ट साहित्य की और ऐसे साहित्य की रचना हुई जो राष्ट्रवाद से ओत–प्रोत था। इसमें भारत में रहनेवाले यूरोपिओं के मुकदमों पर विचार करने का अधिकार भारतीय मॅजिस्ट्रेट को देने की व्यवस्था की गई थी। किन्तू यूरोपिय समुदाय के सामूहिक विरोध के कारण यह बिल पास न हो सका। इस घटना ने भारतीय को यह अनुभव करा दिया की, गुलामी की हालत में उन्हे न्याय नही मिल सकता। ''इस बिल के विरोध में किये गये यूरोपिओं के आंदोलन ने भारत की राष्ट्रीय विचारधारा को जितनी एकता प्रदान की, उतनी वह बिल पारित हो कर भी प्रदान नही कर सकता था।'[6] भारत की आत्मनिर्भरता, समाज व्यवस्था का वर्णन चार्ल्स मेटकॉफ ने इन शब्दों में किया है ''ग्राम व्यवस्था छोटे–छोटे गणतंत्र है। अपनी जरुरत की सारी चीजे इन्हे अपने यहाँ प्राप्त है और वे विदेशी संबंधों से मुक्त है। राजकुल लूडकते रहे, क्रांती होती रही, हिन्दू, पठान, मुगल, मराठा, सिख, अंग्रेज क्रमशः मालिक बनते रहे लेकीन ग्राम समाज यथापूर्व बने रहे।''[7] भारतीय समाज के आर्थिक ढांचे मे आए परिवर्तनों ने समाज के गठन में भी परिवर्तन लाया। पूराने उत्पादन सम्बध और वर्ग तेजी से नष्ट होने लगे। यह प्रक्रिया विशेषकर 1813 से तेजी से हुई जब से ब्रिटीश औद्योगिक पूँजी ने भारत को लूटना आरंभ किया। इसी वर्ष से ब्रिटीश कल–कारखानों में बने माल ने भारत पर अपना आक्रमण शुरु किया।

धार्मिक–सामाजिक पुनर्जागरण तथा राष्ट्रीय चेतना :–राष्ट्रीय चेतना के प्रादुर्भाव के सम्बध में अनेक इतिहासकारों का मानना है कि, इसका मुख्य श्रेय ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज, रामकृष्ण मिशन और थियोसॉफिकल सोसायटी को जाता है। उन्नीसवीं सदी के सामाजिक जीवन में बौध्दिक और सांस्कृतिक हलचलें आरंभ होने लगी थी। ब्रिटीश साम्राज्य के विस्तार और इसके साथ औपनिवेशिक संस्कृति और विचारधारा के प्रचार–प्रसार की प्रतिक्रिया में ही यह लहर उठानी शुरु हुई थी। उस काल में आम व्यक्ति जीवन धर्म से ही संचालित होता था। इस कारण धार्मिक सुधार के बिना सामाजिक सुधार संभव नहीं था।[8] राजा राम मोहन राय ने 1828 में बंगाल में ब्रह्म समाज की स्थापना कर सुधार की इस प्रक्रिया को आरंभ किया और फिर धीरे–धीरे संपूर्ण भारत में सुधार की यह लहर फैल गई। कई सुधारवादी आंदोलन और संघटन सामने आए जिनमें प्रार्थना समाज, आर्य समाज थियोसॉफिकल सोसायटी आदि. कई अन्य संगठन एवं संस्थाए बन गई थी। मुसलमानों में भी ऐसे संघटन सामने आए जिन्होने धर्म सुधार के साथ हि साथ मुस्लिम समाज में सुधारों के प्रयास किए। राजा राम मोहन राय, देवेन्द्रनाथ टैगोर, केशवचंद्र सेन, न्या. रानडे, दयानंद सरस्वती, स्वामी विवेकानंद, रामकृष्ण परमहंस आदि. ने विभिन्न परिमाण में धर्म के क्षेत्र में राष्ट्रीयता के अलावा लोकतंत्र के सिध्दांत का भी प्रवेश कराया। आरंभ के धर्मसुधारकों ने व्यक्ति की स्वतंत्रता के सिध्दांत को धर्म के क्षेत्र में भी प्रचारित किया। भारत के प्रारंभीक धर्म सुधार आंदोलन ने ऐसे धार्मिक दृष्टिकोन को विकसित करने की कोशिश की जो हिन्दू, मुसलमान, पारसी आदि. सभी संप्रदायों की एकता कायम कर सके। इस तरह वे भारत के नवीन आर्थिक विकास, जनता के विकास के मार्ग में आनेवाली बाधाओं की समाप्ति, स्त्री–पुरुष की समता के सिध्दांत की स्थापना, जाति व्यवस्था का उन्मूलन जैसे अनेक जटील मुद्दों को हल करने का प्रयास कर रहे थे। इन सुधारवादीयों का उद्देश्य आधुनिकीकरण था न कि, पश्चिमीकरण।[9]

उपसंहारः उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में राष्ट्रीय चेतना जागृत हो गई। जिसका प्रादुर्भाव 1857 के प्रथत आंदोलन में दिखाई देता है। उसका प्रभाव केवल कानपूर तक ही सिमित नही था, वरन संपूर्ण भारत भर उस समय अंग्रेजी हुकूमत और उसके साम्राज्यवादी रवैये के विरुध्द किया गया वह प्रथम ठोस प्रयास था। इन सामाजिक, धार्मिक आंदोलन के जरिए जो सांस्कृतिक वैचारिक संघर्ष चला उसने राष्ट्रीय चेतना को जन्म देने और उसके विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया। राष्ट्रीय चेतना के प्रादुर्भाव से अंग्रेजी हुकूमत को अपने कठोर रवैये को बदलना पडा और जनहितैषी कार्य एवं सामाजिक सुधार आरंभ करने के लिए मजबूर हो गये। इस तरह राष्ट्रीय चेतना के व्दारा अंग्रेजी हुकूमत को एक शिकस्त पहूं

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. चंद्रा बिपीन – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष पृ.क. 13 2. महाजन स्नेहा – 1857 का महान विद्रोह आधुनिक भारत का इतिहास, संपा. शुक्ल आर. एल. पृ. क. 260 3. वही पृ. क. 259 4. साहनी हरबंस – आधुनिक भारत का इतिहास संपा. आर. एल. शुक्ल पृ.क. 479 5. वही पृ.क. 461 6. वही पृ.क. 475 7. मैटकॉफ चार्ल्स – लैण्ड. लैण्ड लॉर्ड्स ॲण्ड द ब्रिटीश राज : नॉर्दन इंडिया इन द 19जी सेंच्यूरी पृ. क. 98 8. संपा. चंद्रा बिपीन – भारत का स्वतंत्रता संघर्ष पृ.क. 47 9. वही पृ.क. 52